E-Learning material prepared by Dr. Dhananjay Vasudeo Dwivedi, Assistant Professor, Department of Sanskrit, Dr. Shyama Prasad Mukherjee University, Ranchi

भट्टनायक का भुक्तिवाद

डा० धनञ्जय वासुदेव द्विवेदी

सहायक प्रोफेसर, संस्कृत विभाग,

डा० श्यामा प्रसाद मुखर्जी विश्वविद्यालय, राँची

भट्टनायक ने सांख्यशास्त्र के मतानुसार रससूत्र-"विभावानुभावव्यभिचारिसंयोगाद् रसनिष्पत्तिः" की व्याख्या की है। काव्यप्रकाशकार भट्टनायक के मत को स्पष्ट करते हुए कहते हैं- "न तटस्थ रूप से और न आत्मगत रूप से रस की प्रतीति होती है, न उत्पत्ति होती है और न अभिव्यक्ति होती है, अपितु काव्य और नाटक में अभिधा से भिन्न विभावादि के साधारणीकरण रूप 'भावकत्व' नामक व्यापार से भाव्यमान (साधारणीकृत) स्थायीभाव सत्त्व के उद्रेक से प्रकाश और आनन्दमयसंविद् (ज्ञान) के विश्रान्त स्वरूप वाला अर्थात् वेद्यान्तर सम्पर्कशून्य भोग से भोगा जाता है अर्थात् भोजकत्व व्यापार द्वारा अनुभव (भोग) किया जाता है यह भट्टनायक का मत है"-

"न ताटस्थ्येन नात्मगतत्वेन रसः प्रतीयते नोत्पद्यते, नाभिव्यज्यते, अपितु काव्ये नाट्ये चाभिधातो द्वितीयेन विभावादिसाधारणीकरणात्मना भावकत्वव्यापारेण भाव्यमानः स्थायी सत्वोद्रेकप्रकाशानन्दमयसंविद्विश्रान्तिसतत्त्वेन भोगेन भुज्यते' इति भट्टनायकः"।

भट्टनायक का मत 'भुक्तिवाद' के नाम से विख्यात है। ये सांख्यवादी आचार्य हैं। इनका सिद्धान्त सांख्य-सिद्धान्त पर आधारित है। इन्होंने भरतसूत्र के 'संयोग' पद का अर्थ 'भोज्य-भोजकभाव सम्बन्ध' और 'निष्पत्ति' शब्द का अर्थ 'भुक्ति' किया है। इस प्रकार इनके मतानुसार विभाव, अनुभाव और व्यभिचारीभाव के द्वारा 'भोज्य-भोजक-भावरूप सम्बन्ध' से रस की निष्पत्ति (भुक्ति) होती है अर्थात् सामाजिक द्वारा रस का भोग (आस्वादन) किया जाता है। भट्टनायक पूर्वोक्त मतों का खण्डन करते हुए कहते हैं कि रस न प्रतीत होता है, न उत्पन्न होता है और न अभिव्यक्त होता है, अपितु विभावादि साधारणीकरणरूप भावकत्व व्यापार से भावित होता हुआ सत्त्वोद्रेक, प्रकाशानन्द रूप संविद्विश्रान्तिस्वरूप भोजकत्व (भोग) से आस्वादित होता है।

भट्टनायक प्रथम भट्टलोल्लट के मत का खण्डन करते हुए कहते हैं कि भट्टलोल्लट जो मुख्य रूप से तटस्थ राम में (अनुकार्य में) और गौणरूप से तटस्थ (अनुकर्ता नट) में रस की उत्पत्ति और प्रतीति मानते हैं वह ठीक नहीं; क्योंकि ऐसा मानने पर सामाजिक में रस की प्रतीति कैसे होगी? अतः रस की निष्पत्ति न अनुकार्य राम में होती है और न अनुकर्ता नट में ही होती है; क्योंकि दोनों ही तटस्थ हैं, उदासीन हैं, तटस्थ में रस की निष्पत्ति नहीं होती, वास्तविक निष्पत्ति तो सामाजिक में होती है। श्रीशंकुक तटस्थ अनुकर्ता नट में रस की अनुमिति मानते हैं किन्तु उनका मत भी समीचीन प्रतीत नहीं होता, क्योंकि उनके मत में अनुमान से होने वाला ज्ञान परोक्ष होता है, अतः अनुमिति के परोक्षज्ञान होने से प्रत्याक्षात्मक रसानुभूति नहीं हो सकती; क्योंकि प्रत्यक्षज्ञान से जो चमत्कारपूर्ण रसानुभूति होती है वह अनुमान के द्वारा संभव नहीं है, क्योंकि अन्य में विद्यमान आनन्दानुभूति का अनुमान अन्य में कैसे हो सकता है? अतः यह सिद्धान्त भी स्वीकार्य नहीं है। इस प्रकार ताटस्थ्य से (अनुकार्य तथा अनुकर्ता) रस की प्रतीति, उत्पत्ति और अनुमिति नहीं हो सकती।

भट्टनायक के अनुसार आत्मगत (स्वगत) रूप से भी रस की प्रतीति नहीं होती, क्योंकि यदि स्वगत (आत्मगत सामाजिकगत) रस की प्रतीति मानते हैं तो करुणरस में सामाजिक को दुःख की और भयानक रस में भय की प्रतीति होने लगेगी, ऐसी स्थिति में तन्मयता न होने से सामाजिक को रसानुभूति नहीं होगी इसलिए न तो परगत (अनुकार्य गत और अनुकर्तृगत) रस की उत्पत्ति या प्रतीति होगी; क्योंकि अनुकार्य रामादि के वहाँ न रहने से अनुकार्य में उत्पन्न रस से सामाजिक को रस की अनुभूति नहीं हो सकती। अनुकर्ता नट में भी उत्पत्ति, प्रतीति या अनुमिति नहीं हो सकती। आत्मगत रूप से रस की उत्पत्ति या प्रतीति नहीं हो सकती, यह, भट्टनायक का अभिप्राय है।

नाभिव्यज्यते-अभिनवगुप्त रस की निष्पत्ति अनुकार्य राम तथा अनुकर्ता नट में न मानकर सामाजिक में रस की अभिव्यक्ति मानते हैं। किन्तु भट्टनायक उनके मत से सहमत नहीं हैं। उनका कहना है कि स्थायीभावरूप रस की अभिव्यक्ति न तो अनुकर्ता नट में संभव है और न तो सहृदय में ही संभव है। क्योंकि अभिव्यक्ति सदैव विद्यमान वस्तु की ही होती है (सिद्धस्यैव तत्संभवात्) और वस्तु की सत्ता अभिव्यक्ति के पूर्व भी रहती है और बाद में भी; किन्तु रस तो अनुभूतिस्वरूप होने से अनुभूतिकाल में ही उसकी सत्ता रहती है। उसके पहिले या बाद में उसका अस्तित्व नहीं रहता, अतः उसकी अभिव्यक्ति

नहीं हो सकती। इस प्रकार भट्टतायक ने उत्पत्तिवाद, अनुमितिवाद और अभिव्यक्तिवाद तीनों मतों का खण्डन कर भुक्तिवाद की स्थापना की है।

भट्टनायक ने उत्पत्तिवाद, अनुमितिवाद तथा अभिव्यक्तिवाद तीनों मतों का खण्डन करके भुक्तिवाद की स्थापना की है। उन्होंने भुक्तिवाद की सिद्धि के लिए अभिधा के अतिरिक्त 'भावकत्व' और 'भोजकत्व' नामक दो नवीन व्यापारों को स्वीकार किया है। इस प्रकार भट्टनायक काव्य के तीन व्यापार मानते हैं अभिधा, भावकत्व और भोजकत्व। इनमें अभिधा व्यापार के द्वारा काव्य का अर्थमात्र समझा जाता का अर्थात् काव्य में अभिधा द्वारा उत्पन्न अर्थ व्यक्ति विशेष (नायक-नायिका) के रत्यादि से सम्बद्ध होता है और भावकत्व व्यापार उस अभिधा-जन्य अर्थ को परिष्कृत कर उसका व्यक्ति विशेष से सम्बन्ध हटाकर साधारणीकरण कर देता है और सामाजिक का उससे सम्बन्ध हो जाता है। इसी भावकत्व व्यापार द्वारा सामाजिक के अन्तःकरण में रामादिरूप विभावादि का साधारणीकरण हो जाता है। भट्टनायक के अनुसार काव्य और नाटक में अभिधा और लक्षणा से भिन्न एक विलक्षण शक्ति होती है। इस विलक्षण शक्ति को ही भावकत्व व्यापार कहते हैं। इस भावकत्व व्यापार के द्वारा साधारणीकृत विभावादि व्यक्ति विशेष के सम्बन्ध से उन्मुक्त होकर सामाजिक से सम्बद्ध हो जाते हैं तब उनमें व्यक्तिगत विशेषताएं नहीं रह जाती। इस प्रकार विभावादि का साधारणीकरण हो जाने के बाद रत्यादि स्थायीभाव का भी साधारणीकरण हो जाता है। अर्थात् रामादिगत रत्यादि साधारण रत्यादि के रूप में सामाजिक के समक्ष उपस्थित होते हैं। प्रदीपकार के अनुसार सीतादि का साधारण नायिका के रूप में भासित होता साधारणीकरण है।

इस प्रकार भावकत्व व्यापार द्वारा साधारणीकरण हो जाने पर भोजकत्व व्यापार उस साधारणीकृत रत्यादि स्थायीभाव का रस के रूप में भोग करवाता है। तात्पर्य यह है कि भट्टनायक के अनुसार भाव्यमान (साधारणीकृत) रत्यादि स्थायीभाव सहृदयों के हृदय में रजस् और तमस् को अभिभूत करके सत्त्वगुण का उद्रेक होने से प्रकाशरूप और आनन्दरूपी सद्विश्रान्तिरूप अर्थात् वेद्यान्तरसम्पर्कशून्य भोजकत्व व्यापार से आस्वादित किया जाता है। भाव यह कि भट्टनायक के अनुसार भोजकत्व व्यापार रस का भोग कराने वाला व्यापार है। भोग चित्त की वह अवस्था-विशेष है जिसमें रजस् और तमस् का सर्वथा तिरोभाव होकर आनन्दरूप सत्त्वगुण का उद्रेक होता है जो शुद्ध,

सात्त्विक, प्रकाश एवं आनन्दरूप तथा वेद्यान्तरसम्पर्कशून्य होता है जिसमें विलक्षण आनन्द की अनुभूति होती है, यही रसभोग है। यह आनन्दानुभव साधारण आनन्द से उत्कृष्ट और ब्रह्मास्वाद सहोदर कहा जाता है। इस प्रकार भट्टनायक के अनुसार काव्य के श्रवण तथा नाटक के दर्शन से पहले उसका अर्थ समझा जाता है, फिर भावकत्व व्यापार द्वारा भावित किया जाता है। उसके बाद सत्त्वगुण के उद्रेक से रजोगुण और तमोगुण के दब जाने पर प्रकाशरूप आनन्द का अनुभव होता है, यह आनन्दानुभव वेद्यान्तरसम्पर्कशून्य और ब्रह्मा स्वादसविध है, यही रसानुभव है।

समीक्षा-भट्टनायक रस की न उत्पत्ति मानते हैं न अनुमिति और न अभिव्यक्ति। वे रस को भावित मानते हैं। उक्त तीनों से अतिरिक्त भावित होना क्या है? उत्पत्ति और अनुमिति का खण्डन किया जा चुका है, अतः यह भावित होना व्यंजना के अतिरिक्त और क्या हो सकता है? यह तो व्यंजना का ही नामान्तर प्रतीत होता है। भट्टनायक का कथन है कि स्थायीभाव का भावन एक विलक्षण शक्ति है किन्तु व्यंजनावादियों का कथन है कि वासनारूप स्थायी प्रत्येक प्राणी में अव्यक्तावस्था में विद्यमान रहता है। और जब काव्य में विभावादि के द्वारा व्यक्त होता है तब रस कहलाता है। इस प्रकार व्यक्त स्थायीभाव वासनारूप होने के कारण स्वतः साधारणीकृत रहता है अतः पृथक् साधारणीकृत व्यापार की क्या आवश्यकता है? इसी प्रकार भट्टनायक की भुक्ति रस प्रतीति से पृथक् नहीं है सत्त्वगुण के उद्रेक से चेतना जब आनन्दमय रूप में व्यक्त हो उठती है तो रस प्रतीति कहलाती है और यही रस प्रतीति भुक्ति है। अतः भट्टनायक का भावकत्व और भोजकत्व व्यापार व्यंजना और रसास्वाद के भिन्न नहीं प्रतीत होते, केवल नामान्तर प्रतीत होते हैं ।